बच्चों की तरबियत और माँ-बाप की ज़िम्मेदारियाँ

(मौजूदा दौर की चुनौतियों को देखते हुए)

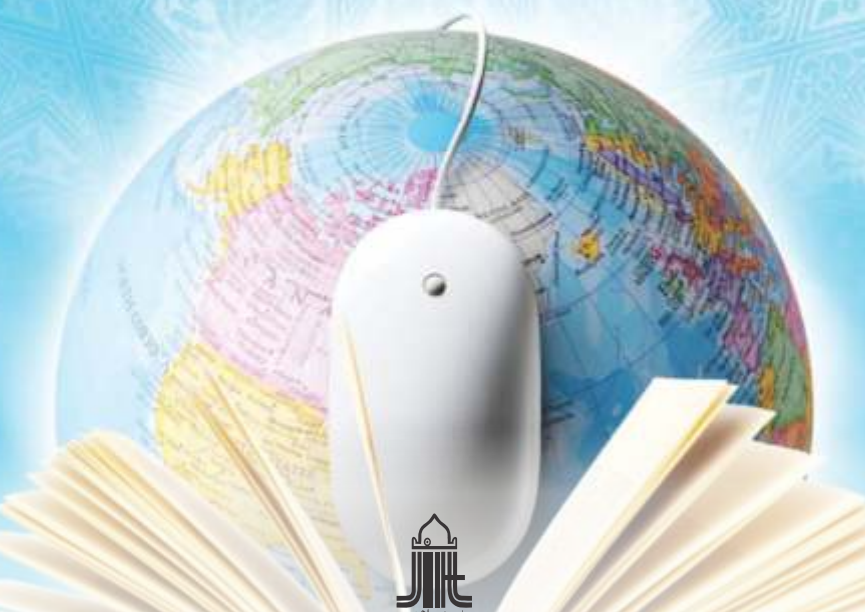

शोबा-ए-ख़वातीन

जमाअत इस्लामी हिन्द

हल्क़ा दिल्ली व हरियाणा

बच्चों की तरबियत
और
माँ-बाप की ज़िम्मेदारियाँ
(मौजूदा दौर की चुनौतियों को देखते हुए)

शोबा-ए-ख़वातीन
जमाअत इस्लामी हिन्द
हल्क़ा दिल्ली व हरियाणा
1353, बाज़ार चितली क़ब्र, दिल्ली-110006
ईमेलः jihdelhi@gmail.com
मोबाइल नं० : 9953413211, 9871510945

© सर्वाधिकार सुरक्षित

नाम किताब : बच्चों की तरबियत और माँ-बाप की ज़िम्मेदारियाँ
(मौजूदा दौर की चुनौतियों को देखते हुए)

पृष्ठ : 40

संस्करण : मार्च 2019 ई॰

तादाद : 8000

प्रकाशक : **शोबा-ए-ख़वातीन**
जमाअत इस्लामी हिन्द
हल्क़ा दिल्ली व हरियाणा
1353, बाज़ार चितली क़ब्र, दिल्ली-110006
ईमेलः jihdelhi@gmail.com
मोबाइल नं० : 9953413211, 9871510945

बच्चों की तरबियत और माँ-बाप की ज़िम्मेदारियाँ

अल्लाह तआला ने इनसान को बहुत तरह की नेमतें दी हैं। उनमें से एक बहुत बड़ी नेमत औलाद है। यह अल्लाह का एहसान है कि उसने सिर्फ़ नेमतें देने पर ही बस नहीं किया, बल्कि उन्हें इस्तेमाल करने का सलीक़ा भी सिखाया। इस्लाम ने नेमतों के सिलसिले में शुक्रगुज़ारी की तालीम दी है। इनसान बच्चों से बड़ी ख़ुशी महसूस करता है, उनसे तरह-तरह की उम्मीदें बाँधता है, उनके मुस्तक़बिल को बेहतर-से-बेहतर बनाने की कोशिश करता है और उनके लिए अपना सब कुछ क़ुरबान करने से भी पीछे नहीं हटता।

बच्चों के सिलसिले में इस्लाम का अपना नुक़्ता-ए-नज़र (दृष्टिकोण) है। वह बच्चों के हुक़ूक़ अदा करने और उनकी तालीम व तरबियत की ज़िम्मेदारी माँ-बाप पर डालता है और उन्हें ख़बरदार करता है कि वे उनके सिलसिले में अल्लाह के सामने जवाबदेह हैं।

क़ुरआन में अल्लाह तआला फ़रमाता है—

"ऐ ईमान लानेवालो! बचाओ अपने आपको और अपने घरवालों को (जहन्नम की) आग से, जिसका ईंधन बनेंगे इनसान और पत्थर।" (क़ुरआन, 66:6)

दूसरी जगह फ़रमाया—

"बेशक तुम्हारे माल और तुम्हारी औलाद तो बस एक आज़माइश हैं और अल्लाह ही है जिसके पास बड़ा अज्र (बदला) है।"

(क़ुरआन, 64:15)

बच्चों की तरबियत ज़रूरी है

बच्चों की बेहतरीन तालीम व तरबियत न सिर्फ़ माँ-बाप की दीनी और समाजी ज़िम्मेदारी है, बल्कि अपनी दीनी रिवायतों और तौहीद के पैग़ाम को ज़िन्दा रखने और अल्लाह की ज़मीन पर इनसाफ़ के निज़ाम को क़ायम रखने के लिए भी यह ज़रूरी है।

अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने फ़रमाया—

"तुममें से हर शख़्स निगराँ है और तुममें से हर एक अपने मातहत लोगों के बारे में जवाबदेह है। मर्द अपने घरवालों का निगराँ है और वह उनके बारे में जवाबदेह है। औरत अपने शौहर के घर की ज़िम्मेदार है और उससे उसकी ज़िम्मेदारी के बारे में पूछा जाएगा।" (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

यह इनसान की तंगनज़री है कि वह अपने बच्चों को सिर्फ़ अपनी नस्ल और दुनिया में अपना नाम बाक़ी रखने का ज़रिआ समझता है और उनके हवाले से मुस्तक़बिल के जो ख़ाब देखता है, वे इसी दुनिया और दुनिया की दौलत को हासिल करने तक महदूद रहते हैं। औलाद इनसान के लिए वह नेमत है जो मरने के बाद भी उसको फ़ायदा पहुँचाने का ज़रिआ बन सकती है।

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया—

"जब इनसान मर जाता है तो उसके आमाल का सिलसिला ख़त्म हो जाता है, मगर तीन क़िस्म के आमाल ऐसे हैं जिनका अज्र व सवाब उसे मरने के बाद भी मिलता रहता है : एक यह कि वह सदक़ा-ए-जारिया कर जाए, दूसरे यह कि वह ऐसा इल्म छोड़ जाए जिससे लोग फ़ायदा उठाएँ, तीसरे ऐसी नेक औलाद जो माँ-बाप के लिए दुआ करती रहे।" (हदीस : मुस्लिम)

रसूलों का नमूना

क़ुरआन मजीद में अल्लाह तआला ने अपने रसूलों और नेक बन्दों के कुछ मिसाली नमूने (आदर्श) इनसानों के सामने पेश किए हैं, ताकि औलाद के सिलसिले में उनके सामने यह बात वाज़ेह रहे कि उनकी तमन्नाओं का मरकज़ क्या होना चाहिए। हज़रत इबराहीम (अलैहि॰) की ज़िन्दगी के बहुत-से पहलू क़ुरआन मजीद हमारे सामने रखता है। उनमें एक पहलू औलाद के सिलसिले में तमन्नाओं और आरज़ुओं का है। क़ुरआन मजीद में इबराहीम (अलैहि॰) की दुआ के अलफ़ाज़ हमारे सामने आते हैं। उनमें हम देखते हैं कि हज़रत इबराहीम (अलैहि॰) ने तौहीद (अल्लाह के एक होने) का पैग़ाम इनसानों तक पहुँचाने और तौहीद के मरकज़ बैतुल्लाह (काबा) की तामीर की ख़िदमत में अपनी औलाद को बराबर का शरीक रखा।

एक जगह अल्लाह ने फ़रमाया—

> याद करो, इबराहीम और इसमाईल जब इस घर की दीवारें उठा रहे थे और दुआ करते जाते थे कि "ऐ हमारे रब! हमसे यह ख़िदमत क़ुबूल फ़रमा। तू सबकी सुननेवाला और सब कुछ जाननेवाला है। ऐ रब! हम दोनों को अपना मुस्लिम (फ़रमाँबरदार) बना, हमारी नस्ल से एक ऐसी क़ौम उठा जो तेरी मुस्लिम (फ़रमाँबरदार) हो।" (क़ुरआन, 2:127,128)

एक दूसरी जगह फ़रमाया—

> "याद करो वह वक़्त जब इबराहीम ने दुआ की थी कि परवरदिगार! इस शहर को तू अम्न का शहर बना और मुझे और मेरी औलाद को बुतपरस्ती से बचा।" (क़ुरआन, 14:35)

इन दुआओं में औलाद की तरबियत और उनको ईमानवाला और नेक बनाने की तड़प झलकती है। फिर जब दुआ के नतीजे में

अल्लाह तआला इसमाईल (अलैहि॰) और इसहाक़ (अलैहि॰) जैसी बुलन्द सीरत व किरदार रखनेवाले बेटों से नवाज़ता है तो हज़रत इबराहीम (अलैहि॰) फिर अल्लाह का शुक्र अदा करते हुए कहते हैं—

> "शुक्र है अल्लाह का, जिसने मुझे बुढ़ापे में इसमाईल और इसहाक़ जैसे बेटे दिए। हक़ीक़त यह है कि मेरा रब ज़रूर सुनता है। ऐ परवरदिगार! मुझे नमाज़ क़ायम करनेवाला बना और मेरी औलाद में से भी (वे लोग उठा जो ये काम करें)। परवरदिगार! मेरी दुआ क़ुबूल कर।" (क़ुरआन, 14:40)

फिर क़ुरआन हज़रत याक़ूब (अलैहि॰) का ज़िक्र करता है कि जब वह दुनिया छोड़ रहे थे, तो औलाद के लिए उनकी फ़िक्रमन्दी क्या थी?

> क्या तुम उस वक़्त मौजूद थे जब याक़ूब इस दुनिया से रुख़सत हो रहा था? उसने मरते वक़्त अपने बेटों से पूछा, "बच्चो! मेरे बाद तुम किसकी बन्दगी करोगे?" (क़ुरआन, 2:133)

हज़रत इबराहीम (अलैहि॰) और हज़रत याक़ूब (अलैहि॰) जैसे जलीलुल-क़द्र पैग़म्बरों की औलाद के सिलसिले में फ़िक्रमन्दी के ये नमूने अल्लाह तआला ने ईमानवाले बन्दों के सामने इसी लिए रखे हैं कि यही एक ईमानवाले की तमन्नाओं और आरज़ुओं का मरकज़ होना चाहिए।

सूरा-31 लुक़मान में जनाब लुक़मान ने अपने बेटे को जो नसीहतें की थीं, वह भी अस्ल में बच्चों की तरबियत के सिलसिले में अल्लाह की रहनुमाई की नुमायाँ मिसाल है—

> याद करो जब लुक़मान अपने बेटे को नसीहत कर रहा था, तो उसने कहा, "बेटा! अल्लाह के साथ किसी को शरीक न करना। हक़ीक़त यह है कि शिर्क बहुत बड़ा ज़ुल्म है।" (क़ुरआन, 31:13)

(और लुक़मान ने कहा था कि) "बेटा कोई चीज़ राई के दाने के बराबर भी हो, और किसी चट्टान में या आसमानों या ज़मीन में कहीं छिपी हुई हो, अल्लाह उसे निकाल लाएगा। वह बारीक-से-बारीक चीज़ देख लेनेवाला (सूक्ष्मदर्शी) और ख़बर रखनेवाला है। बेटा, नमाज़ क़ायम कर, नेकी का हुक्म दे, बुराई से मना कर, और जो मुसीबत भी तुम पर पड़े, उस पर सब्र कर। ये वे बातें हैं जिनकी बड़ी ताकीद की गई है। और लोगों से मुँह फेरकर बात न कर, न ज़मीन में अकड़कर चल, अल्लाह किसी घमण्डी और डींग मारनेवाले शख़्स को पसन्द नहीं करता। अपनी चाल में एतिदाल (सन्तुलन) बनाए रख और अपनी आवाज़ ज़रा धीमी रख, सब आवाज़ों से ज़्यादा बुरी आवाज़ गधों की आवाज़ होती है।" (क़ुरआन, 31:16 से 19)

तरबियत का मतलब

तरबियत दरअस्ल बढ़ाने, सलाहियतों को उभारने और सही रुख़ देने, ज़िन्दगी के बारे में मुसबत (सकारात्मक) फ़िक्र पैदा करने, अल्लाह को पहचानने और उसकी फ़रमाँबरदारी का शौक़ परवान चढ़ाने और बुलन्द अज़्म व हौसले पैदा करने का नाम है।

बच्चे दरअस्ल नर्मो-नाज़ुक पौधों की तरह होते हैं। जिस तरह एक नाज़ुक पौधे को मिट्टी, खाद, पानी और रौशनी पहुँचाने के साथ सही माहौल बनाने और मुमकिन ख़तरों से बचाव की ज़रूरत होती है, उसी तरह बच्चों के लिए जिस्मानी तौर पर परवान चढ़ने, सेहत की हिफ़ाज़त और माहौल के ख़तरों से बचाव के साथ उनकी दीनी, अख़लाक़ी और ज़ेहनी व फ़िक्री (वैचारिक) तरक़्क़ी और माहौल में फैली बुराइयों से बचाव भी लाज़िमी है।

माँ की सीरत के असरात

एक बच्चा दुनिया में आने से पहले ही अपनी माँ के असरात क़ुबूल करने लगता है। आज जेनेटिक साइंस से भी यह बात साबित हो गई है कि माँ के पेट में पलनेवाला बच्चा (भ्रूण) अपने शुरुआती दिनों ही से माँ की आदतें और उसके जज़बात को अपने अन्दर समाना शुरू कर देता है। माँ जिस तरह के जज़बात और सोच रखती होगी, बच्चे के अन्दर उसकी झलक मौजूद होगी। माँ गर्भ के दिनों में अपने लिए जिस तरह के काम करती है, उनके असरात बच्चों पर पड़ते हैं। समझदार माएँ वक़्त को बेकार चीज़ों और बे-मतलब बातों में नहीं गुज़ारतीं। हमारे घरों में आम तौर पर हामिला (गर्भवती) औरतों की जिस्मानी सेहत का ख़याल रखा जाता है और उनको किसी भी तरह के ज़ेहनी तनाव से दूर रखने की कोशिश की जाती है, लेकिन अख़लाक़ी व दीनी एतिबार से बेहतर माहौल, बेहतर कामों की तरफ़ ध्यान नहीं दिलाया जाता। इसमें हमारी नासमझी और नादानी का दख़ल है। ख़ानदान के बड़े बुज़ुर्गों की भी यह ज़िम्मेदारी है कि वे अपने छोटों की रहनुमाई करें। अगर इस वक़्त को घटिया मनोरंजक किताबें पढ़ने, गन्दी फ़िल्में और फ़ुज़ूल सीरियल देखने में गुज़ारें तो बच्चे पर भी इसके ख़राब असरात पड़ेंगे।

हलाल कमाई

अच्छी औलाद की तमन्ना हर माँ-बाप को होती है। इसी लिए सब ही माँ-बाप अपने बच्चों को बेहतर देखना चाहते हैं। इस तमन्ना को हक़ीक़त का रूप देने के लिए ज़रूरी है कि

माँ-बाप सख़्ती के साथ हराम रोज़ी से परहेज़ करें। इस बात को यक़ीनी बनाएँ कि घर में हलाल कमाई के अलावा किसी ऐसे ज़रिए से एक भी पैसा न आने पाए जिसके हलाल होने पर ज़रा-सा भी शक हो। हराम कमाई दरअस्ल ख़ुदा की नाराज़ी मोल लेना है। हलाल व हराम की तमीज़ न रखनेवाले ख़ुदा की रहमत से दूर हो जाते हैं। मशहूर इस्लामी शाइर अल्लामा इक़बाल (रह॰) की माँ के बारे में आता है कि वे अपने शौहर की कमाई के पाक होने से मुत्मइन न थीं, क्योंकि इक़बाल (रह॰) के बाप वकालत करते थे और वह चाहती थीं कि बेटे की परवरिश में शक वाले ज़रिए से हासिल की हुई आमदनी से बचा जाए। इसके लिए उन्होंने अपने बाप के दिए हुए ज़ेवरात बेचकर एक बकरी ख़रीदी, ताकि उसके दूध से इक़बाल (रह॰) की परवरिश करें। उनकी इस बात से मुतास्सिर होकर इक़बाल (रह॰) के बाप ने वकालत का पेशा छोड़ दिया। इक़बाल (रह॰) की माँ अपने बच्चे की परवरिश के लिए इस क़द्र सावधान रहती थीं कि कभी वुज़ू किए बिना अपने बच्चे को दूध न पिलातीं। इसके असरात इक़बाल (रह॰) पर ये पड़े कि उनकी शाइरी लोगों में दीनी समझ पैदा करने का ज़रिआ बनी और उनकी शाइरी को अल्लाह तआला ने वह अज़मत अता फ़रमाई कि वे 'शाइरे-मशरिक़' कहलाए।

माँ-बाप का रोल

बच्चों की तरबियत के सिलसिले में सबसे पहले ख़ुद पर ध्यान देना चाहिए। बच्चे शुरुआती उम्र ही से अपने माँ-बाप की पैरवी करने लगते हैं। इसलिए माँ-बाप को बहुत मुहतात (सावधान) रहना चाहिए। अगर यह एहसास हर वक़्त ताज़ा रहे

कि अल्लाह हर जगह मौजूद है और वह हमें हर हाल में देख रहा है, तो यह मसला पैदा ही नहीं होगा। एक परहेज़गार माँ और बाप कभी यह गवारा नहीं करते कि जान- बूझकर उनसे कोई ग़लत काम हो जाए। वे बच्चों को अल्लाह की अमानत समझते हैं और उनकी तरबियत में अल्लाह और रसूल (सल्ल॰) के हुक्मों का ख़याल रखते हैं।

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया—

"किसी बाप ने अपनी औलाद को अच्छी तरबियत से बेहतर कोई तोहफ़ा नहीं दिया।" (हदीस : तिरमिज़ी)

बच्चे की तरबियत का मिसाली नमूना (आदर्श) उसके माँ-बाप ही होते हैं। अगर माँ-बाप नर्म मिज़ाज, ख़ुश मिज़ाज, अच्छी सीरत और अच्छे किरदार वाले हैं, तो बच्चों में भी उनका असर आएगा। इसके बरख़िलाफ़ अगर माँ-बाप सख़्त मिज़ाज और ग़ुस्सैले हों तो उनके मनफ़ी (नकारात्मक) असरात भी बच्चों पर पड़े बिना नहीं रह सकते।

माँ-बाप को बच्चों की तरबियत सब्र व धैर्य के साथ करनी चाहिए। माँ-बाप के आपसी मनमुटाव के असरात बच्चों पर पड़ते हैं, इससे बचना चाहिए। झूठ, ग़ीबत (पीठ-पीछे बुराई) और आपसी झगड़ों से घर का माहौल ख़राब होता हो, तो बच्चे यह सब देखकर सीख लेते हैं। अगर बाप घर पर रहते हुए किसी मुलाक़ाती के घर आने पर बच्चे से यह कहलवा दे कि "अब्बू घर पर नहीं हैं", तो यह हरकत बच्चे को झूठा बनाने के लिए काफ़ी है। इससे बचना चाहिए। हज़रत आइशा (रज़ि॰) बयान करती हैं कि एक औरत अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के पास आई, उसके साथ एक छोटी बच्ची थी। उसने बच्ची को अपने

पास यह कहकर बुलाया कि मैं तुम्हें कुछ दूँगी। बच्ची के आने पर उसने उसे एक खजूर दी। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने यह देखकर फ़रमाया कि "अगर तुम बच्ची को कुछ न देतीं तो यह तुम्हारे हक़ में झूठ लिखा जाता।" (हदीस : अबू-दाऊद)

बच्चों के रख-रखाव, रहन-सहन, आदतों और तौर-तरीक़ों पर माँ-बाप ख़ास तौर पर ध्यान दें और उनकी तरबियत के सिलसिले में अपनी ज़िम्मेदारी अदा करें। वे बचपन ही से बच्चों को दीनी फ़र्ज़ों को अदा करने की तरफ़ ध्यान दिलाते रहें।

नबी (सल्ल॰) का इरशाद है—

> "अपनी औलाद को नमाज़ पढ़ने का हुक्म दो, जब वे सात साल के हो जाएँ और नमाज़ के लिए उनको मारो, जब वे दस साल की उम्र के हो जाएँ। और इस उम्र को पहुँचने के बाद उनके बिस्तर अलग कर दो।" (हदीस : अबू-दाऊद)

माँ-बाप बेटों और बेटियों में फ़र्क़ न करें, बल्कि दोनों के साथ बराबरी का बरताव करें। मुस्लिम घरानों में शादी-ब्याह के मौक़े पर जहेज़ के लेन-देन की ग़ैर-इस्लामी रस्मों का रिवाज आम हो जाने की वजह से लड़कियों को बोझ समझा जाता है। सोचने के इस ढंग की वजह से कुछ घरों में बचपन ही से लड़कों और लड़कियों में भेद-भाव किया जाता है। यह इन्तिहाई नापसन्दीदा रवैया है। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया—

> "जिस शख़्स की कोई बच्ची पैदा हुई और उसने जाहिलियत के तरीक़े पर उसे ज़िन्दा दफ़न नहीं किया और न उसको कमतर समझा और न लड़कों को उसके मुक़ाबले में ज़्यादा अहमियत दी तो अल्लाह ऐसे लोगों को जन्नत में दाख़िल करेगा।"
>
> (हदीस : अबू-दाऊद)

लड़कियों की तरबियत पर ख़ास तौर से ध्यान देने की ज़रूरत है। उनका लिबास, चाल-ढाल और बातचीत का अन्दाज़ शरीफ़ाना (सभ्य) होना चाहिए। लड़कियों को लड़कों जैसे या अधनंगे लिबास पहनना ग़ैर-इस्लामी अमल है। हदीस में इस बात से सख़्ती के साथ मना किया गया है। छोटी बच्चियों को खुला हुआ लिबास पहनाने से शर्मो-हया का एहसास कम हो जाता है। कुछ लोग यह समझते हैं कि बच्ची अभी छोटी है, कुछ भी पहना लो, बड़ी होगी तो सही लिबास पहना लेंगे। यह रवैया माँ-बाप की बहुत बड़ी भूल है। जिस ज़माने में बच्चों का ज़ेहन बनता है, उसमें हम अपनी लापरवाही से उनके ज़ेहन में जो चीज़ें बिठा देते हैं, वे गहराई तक बैठ जाती हैं और बाद में निकालना चाहें तो बड़ी मेहनत और कोशिश करनी पड़ती है और कभी-कभी तो हम इस कोशिश में कामयाब भी नहीं हो पाते।

बच्चों से मुहब्बत

अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) बच्चों से बहुत प्यार करते थे और आप (सल्ल॰) ने लोगों को भी बच्चों से प्यार और मुहब्बत करने की तालीम दी है। छोटे बच्चे आप (सल्ल॰) के पास लाए जाते, आप (सल्ल॰) उनको गोद में लेते और उनके लिए दुआ करते। एक बार का ज़िक्र है कि एक बद्दू (देहाती) आप (सल्ल॰) के पास आया। उसने देखा कि आप (सल्ल॰) हज़रत हसन (रज़ि॰) को गोद में लिए हुए प्यार कर रहे थे। उसे बड़ी हैरत हुई। कहने लगा, "हम तो अपने बच्चों को इस तरह प्यार नहीं करते।" आप (सल्ल॰) ने फ़रमाया—

"अगर अल्लाह ने तुम्हारे दिल से मुहब्बत छीन ली है, तो मैं क्या कर सकता हूँ।" (हदीस : बुख़ारी)

हज़रत अनस (रज़ि॰) फ़रमाते हैं–

"मैं दस साल अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की ख़िदमत में रहा, लेकिन उन्होंने कभी मुझसे यह नहीं कहा कि तुमने यह काम क्यों किया और यह काम क्यों नहीं किया?" (हदीस : बुख़ारी)

बच्चों के सिलसिले में यह उस हस्ती का रवैया था जिसपर पैग़म्बरी की भारी ज़िम्मेदारी थी। इसके बावजूद आप (सल्ल॰) बच्चों पर ध्यान देते, उनको अच्छी बातें सिखाते और उनसे मुहब्बत करते थे। हज़रत उमर-बिन-अब्दुल्लाह (रज़ि॰) के बारे में आता है कि वे चार साल की उम्र से आप (सल्ल॰) की मजलिसों में अपने बाप के साथ जाया करते थे। नबी (सल्ल॰) की ज़िन्दगी पर लिखी गई किताबों में ऐसी अनगिनत मिसालें मिलती हैं कि आप (सल्ल॰) ने बच्चों पर ख़ास ध्यान दिया।

बच्चों के साथ जितना ज़्यादा प्यार-मुहब्बत का बरताव किया जाएगा, उनकी तरबियत उतनी ही आसान होगी। प्यार भरे बरताव का मतलब यह नहीं है कि उनकी हर बात मान ली जाए, जाइज़-नाजाइज़ हर फ़रमाइश पूरी कर दी जाए, बल्कि प्यार भरे रवैये के साथ माँ-बाप अपने बच्चों की तमन्नाओं और आरज़ुओं को सही रुख़ दे सकते हैं। यानी उन्हें समझा सकते हैं कि उनके लिए क्या सही है और क्या ग़लत और उन्हें किस तरह की चीज़ों की तमन्ना करनी चाहिए और किस तरह की चीज़ें उनके लिए फ़ुज़ूल और नुक़सानदेह हैं।

बच्चों की सीरत और उनके किरदार को सुधारने की फ़िक्र के साथ बच्चों की ज़बान पर भी ख़ास ध्यान देना चाहिए। अगर शुरू ही से ज़बान से अच्छे अलफ़ाज़ अदा करने की ताकीद की जाए और दिल में बुरे अलफ़ाज़ से नफ़रत बिठाई जाए, तो बच्चा ज़िन्दगी में कभी गाली-गलौज या बदज़बानी नहीं करेगा।

मस्जिद मुस्लिम समाज में तरबियत का मरकज़ है। बच्चों को मस्जिद में ले जाकर मस्जिद से लगाव और मुहब्बत पैदा करना चाहिए। यह काम उसी वक़्त हो सकता है, जब हमारा समाज अल्लाह और उसके रसूल (सल्ल॰) के हुक्मों पर चलनेवाला और बच्चों से मुहब्बत करनेवाला हो। मस्जिद में मासूम बच्चों का आना मस्जिद का इन्तिज़ाम करनेवालों, मुतवल्ली वग़ैरा और नमाज़ पढ़नेवालों को नागवार नहीं लगना चाहिए। अगर मस्जिद से बच्चों का वास्ता न रहेगा, तो उनकी तरबियत इस्लामी तरीक़े पर नहीं हो सकेगी। इसलिए इस सिलसिले में ऐसा रवैया अपनाने की ज़रूरत है, जिससे बच्चों का ताल्लुक़ भी मस्जिद से बना रहे और मस्जिद के ज़िम्मेदारों और नमाज़ियों को भी कोई शिकायत का मौक़ा न मिले। इसके लिए माँ-बाप को भी चाहिए कि वे बच्चों को बताएँ कि मस्जिद अल्लाह का घर है, यहाँ नमाज़ अदा की जाती है, यह खेल का मैदान या तफ़रीह की जगह नहीं है। साथ ही उन्हें चाहिए कि मस्जिद की पाकी-सफ़ाई का ख़याल रखें। बच्चों को मस्जिद में गन्दगी फैलाने से रोकें और सफ़ाई-सुथराई के लाज़िमी उसूल सिखाएँ।

ख़ानदान के लोगों से ताल्लुक़ात

घर वह छोटी-सी रियासत है जहाँ बच्चे दूसरे लोगों के साथ मिल-जुलकर रहते हैं। इनसानी ताल्लुक़ात की पहली ईंट घर में रखी जाती है। यह जितनी पक्की होगी, आगे ताल्लुक़ात के दायरे भी उतने ही मज़बूत होंगे। बच्चों को बड़ों का अदब करना सिखाया जाए और साथ ही यह बताया जाए कि छोटों के साथ

उनका रवैया कैसा होना चाहिए। भाई-बहनों के हुक़ूक़, माँ-बाप के एहतिराम और बड़ों के अदब के सिलसिले में क़ुरआनी आयतें और हदीसें घर की दीवारों पर मोटे-मोटे हरफ़ों में लिखकर लगानी चाहिएँ, ताकि वे बच्चों के ज़ेहन में बैठ जाएँ। इस सिलसिले में बच्चों से ग़लतियाँ भी होंगी, लेकिन घर की इस तजरिबागाह (प्रयोगशाला) में वे बहुत-कुछ सीखेंगे। ग़लती होने पर उनको मुनासिब अन्दाज़ से समझाया जाए। उनपर यह वाज़ेह किया जाए कि जो लोग छोटों से प्यार और बड़ों का अदब नहीं करते, उनके बारे में अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया—

"वे हममें से नहीं हैं।" (हदीस : अबू-दाऊद, तिरमिज़ी)

इस सिलसिले का दूसरा पहलू जिसके बारे में माँ-बाप से बड़ी चूक होती है, वह यह है कि वे बच्चों से बड़ों का एहतिराम तो करवाते हैं, लेकिन बच्चों को एहतिराम देना, उनकी इज़्ज़ते-नफ़्स (आत्मसम्मान) का ख़याल करना और ग़लती होने पर प्यार के साथ उनके सुधार की तरफ़ ध्यान देना बिलकुल भूल जाते हैं। कुछ ज़हीन बच्चे माँ-बाप के बेजा सख़्त रवैये से इतने मुतास्सिर होते हैं कि अपना एतिमाद खो बैठते हैं। इसके बरख़िलाफ़ जो लोग इन बातों पर भरपूर ध्यान देते हैं, उनके बच्चों में भरपूर ख़ुद-एतिमादी (आत्मविश्वास) पाई जाती है। घर में माँ-बाप की समझदारी से ख़ानदान के लोगों में अदब व एहतिराम का जज़बा परवान चढ़ता है। ऐसे घर के बच्चे जब बाहर क़दम रखते हैं, तो अपने रिश्तेदारों, पड़ोसियों और समाज के दूसरे लोगों से दोस्ताना ताल्लुक़ात क़ायम कर लेते हैं, क्योंकि मेल-जोल रखने और लोगों का एहतिराम और उनके काम आने का जज़बा उनके अन्दर पहले से मौजूद होता है।

दोस्ती में एहतियात और सावधानी

बाहर के माहौल में बच्चों को दोस्त बनाने में आज़ादी देने के साथ सही उसूल भी सिखाने चाहिएँ, ताकि वे बाहर के माहौल से मुतास्सिर न हो जाएँ। अगर माँ-बाप तरबियत के आम उसूलों पर ध्यान दें, तो बच्चा बाहर के माहौल से मुक़ाबला करने में कामयाब होता है। इसके बरख़िलाफ़ अगर माँ-बाप अपनी नासमझी और लापरवाही से उसे इस्लामी तरीक़े से तरबियत देकर सही रंग-रूप में ढालने की कोशिश नहीं करते, तो वह बाहर के रंग में रंग जाता है। बच्चों के मन में शुरू ही से प्यारे नबी (सल्ल॰) का यह फ़रमान बिठा देना चाहिए—

"बुरे साथी से तन्हा रहना ही अच्छा है।" (हदीस : जामेउस्सग़ीर)

इसके अलावा बच्चों को यह भी बताया जाए कि उनके साथी अगर कोई ग़लत काम करते हैं, तो वे उनको सुधारें। बच्चों के ज़रिए से दूसरे बच्चों का सुधार आपके बच्चे को भी बुरे माहौल से बचाएगा, समाज का सुधार होगा, भोले-भाले मासूम बच्चे अपनी उम्र के बच्चों के ज़रिए से न सिर्फ़ ख़ुद सुधर जाएँगे, बल्कि अपने घरों के सुधार का ज़रिआ भी बनेंगे।

तालीम से मुहब्बत

बच्चों में तालीम से मुहब्बत पैदा करने में माँ-बाप का रोल बहुत अहम होता है। माँ-बाप की इल्म से मुहब्बत, कुछ-न-कुछ पढ़ते रहने की आदत बच्चों की तालीम में उनकी दिलचस्पी और तालीम के मैदान में बच्चों को कामयाबी दिलाने में मददगार होती है। जो माँ-बाप इल्म को अहमियत नहीं देते या किताबों से दिलचस्पी नहीं रखते, उनके बच्चों को किताब पढ़ना बोझ महसूस

होता है। इस एहसास के साथ वे तालीम हासिल करने को भी बोझ समझने लगते हैं और फिर तालीम से उनकी दिलचस्पी ख़त्म हो जाती है। इस मामले में माँ का रोल बाप से ज़्यादा अहम है, क्योंकि बाप आम तौर से रोज़गार में मसरूफ़ (व्यस्त) होने की वजह से इस मामले में उतना वक़्त और ध्यान नहीं दे पाते। जो माएँ अपने बच्चों की तालीम में दिलचस्पी लेती हैं, उनके बच्चों की तालीम में दिलचस्पी बनी रहती है और वे तालीम हासिल करने के लिए पूरी दिलचस्पी से आगे बढ़ते हैं।

माँ-बाप बच्चे की तरबियत करते वक़्त उनमें अल्लाह के हर वक़्त और हर जगह देखते रहने का एहसास जगाए रखें, झूठ से बचने और ईमानदारी इख़्तियार करने की ताकीद के साथ उनमें अच्छे अख़लाक़ पैदा करने की कोशिश करें, तो बच्चे समाज में अपनी पहचान बरक़ार रख पाएँगे, समाज में सुधार होगा और वे मुल्क के अच्छे शहरी और मुल्क व समाज को तरक़्क़ी के रास्ते पर ले जानेवाले बनेंगे। इस सिलसिले में माँ-बाप को ख़ास ध्यान देने और मेहनत करने की ज़रूरत है। दुनिया में हर काम के लिए हम तरबियती कोर्स से गुज़रने की ज़रूरत महसूस करते हैं। फ़ैक्टरियों में सामान बनाने की अमली तरबियत के बिना कर्मचारियों को काम पर नहीं रखा जाता, लेकिन औलाद को अच्छा इनसान बनाने के लिए माँ-बाप की इल्मी और फ़िक्री (वैचारिक) तरबियत का मुस्लिम समाज में कोई रिवाज नहीं है। नतीजा यह होता है कि माँ-बाप अपनी समझ और तजरिबे के मुताबिक़ जो चाहते हैं, करते रहते हैं।

तरबियत का असर

बच्चों की तरबियत के सिलसिले में माँ-बाप की ज़िम्मेदारी किस क़द्र अहम है और इस तरफ़ से लापरवाही के नतीजे कितने गंभीर हो सकते हैं, इसका अन्दाज़ा नीचे लिखे दो वाक़िआत से हो सकता है—

एक वाक़िआ हज़रत अब्दुल-क़ादिर जीलानी (रह॰) का है। उनकी माँ ने उन्हें तालीम के लिए बग़दाद के सफ़र पर रवाना करते हुए उनके ख़र्च के लिए चालीस दीनार उनकी सदरी (जैकेट) के अन्दर रखकर सिल दिए, ताकि वे रास्ते में महफ़ूज़ रह सकें। उन्होंने बेटे को विदा करते वक़्त नसीहत की थी कि कभी झूठ न बोलना, चाहे कैसा ही वक़्त आ पड़े। सफ़र के दौरान क़ाफ़िले पर डाका पड़ा। डाकुओं ने लोगों का सामान लूट लिया। जब नन्हे अब्दुल-क़ादिर से एक डाकू ने पूछा, "बताओ, तुम्हारे पास कुछ है?" तो वे बोले, "हाँ, चालीस अशर्फ़ियाँ मेरे पास हैं।" डाकू ने तलाशी ली और कुछ न पाकर बच्चे का मज़ाक़ समझकर आगे बढ़ गया। दूसरे डाकू के पूछने पर भी अब्दुल-क़ादिर ने यही जवाब दिया। फिर उनको डाकुओं के सरदार के पास ले जाया गया। सरदार ने पूछा, "बताओ अशर्फ़ियाँ कहाँ हैं?" उन्होंने जवाब दिया, "वे मेरी सदरी के अन्दर सिली हुई हैं।" डाकुओं के सरदार को बड़ी हैरत हुई। उसने पूछा, "तुम अगर न बताते तो तुम्हारी अशर्फ़ियाँ महफ़ूज़ रहतीं, तुमने हमें क्यों बता दिया?" अब्दुल-क़ादिर ने जवाब दिया, "मेरी अम्मी ने चलते वक़्त नसीहत की थी कि बेटा कभी झूठ न बोलना, तो मैं झूठ कैसे बोलता?" यह सुनकर डाकुओं

के सरदार की आँखें खुल गईं। उसने कहा कि एक छोटा बच्चा अपनी माँ की नाफ़रमानी नहीं करता और एक हम हैं कि रात-दिन अल्लाह की नाफ़रमानी करते हैं। उसने डाके डालने से तौबा कर ली और क़ाफ़िलेवालों का लूटा हुआ सामान वापस कर दिया। उसके साथियों ने भी अपने सरदार का यह अमल देखकर तौबा कर ली और नेक बन गए।

दूसरा वाक़िआ एक माँ के ज़रिए बच्चे की सही तरबियत न करने के असरात के सिलसिले में है। एक माँ बहुत ग़रीब थी। उसने अपने बच्चे को पढ़ने के लिए स्कूल में दाख़िल कराया। बच्चा बड़ा नटखट और शरारती था। कभी किसी की कोई चीज़ उठा लेता, कभी किसी का क़लम चुरा लेता, कभी किसी के पैसे उठाकर छिपा देता। धीरे-धीरे वह चीज़ें ग़ायब करने में माहिर हो गया। ये चीज़ें वह घर पर भी ले जाने लगा। माँ उससे ये चीज़ें लेकर रख लेती। उसके मना न करने और चीज़ें लेकर रख लेने से बच्चे की हिम्मत बढ़ गई। वह दूसरे बच्चों की चीज़ों पर हाथ साफ़ करने लगा। स्कूल में उसके ख़िलाफ़ कार्रवाई की गई और चोरी की वजह से उसे स्कूल से निकाल दिया गया। अब वह दिन-भर बाहर घूमता-फिरता और जहाँ मौक़ा मिलता, हाथ साफ़ कर लेता। उसकी चोरी की आदत पुख़्ता हो गई। कुछ और बच्चे भी उसके साथ शामिल हो गए। कुछ वक़्त गुज़रने के बाद उन्होंने एक गैंग बना लिया और डाके डालने लगे। एक बार वे गिरफ़्तार कर लिए गए। अदालत में पेशी हुई। क़त्ल और डाके डालने के जुर्म में फाँसी की सज़ा सुनाई गई। उसे माँ से मिलवाया गया। बेटा माँ को देखकर उसकी तरफ़ लपका और उसके चेहरे के क़रीब अपना मुँह ले

गया। लोग समझ रहे थे कि माँ से कुछ कहना चाहता है, लेकिन माँ अचानक दर्द से बिलबिला उठी। दरअस्ल बच्चे ने माँ का कान काट लिया था। लोगों ने उस लड़के को बुरा-भला कहा कि कमबख़्त फाँसी पर चढ़ रहा है, अब तो माँ की दुआ लेता। बेटे ने पलटकर कहा, "यही माँ अगर मुझे बचपन में चोरी से रोकती तो आज मैं फाँसी पर न चढ़ता।"

इन दोनों वाक़िआत में हमारे लिए बड़ा सबक़ है। अब्दुल-क़ादिर जीलानी (रह॰) की माँ की तरबियत का यह असर हुआ कि न सिर्फ़ मुसीबत में उनका बच्चा हक़ (सच) पर जमा रहा, बल्कि उसके किरदार से डाकुओं के गरोह की इस्लाह हो गई। जबकि माँ के ज़रिए बच्चे को बुराई से न रोकने का नतीजा यह हुआ कि वह समाज का बहुत बुरा इनसान बन गया, जिसकी वजह से लोगों को बड़ी तकलीफ़ों का सामना करना पड़ा और ख़ुद उसका अंजाम भी बहुत बुरा हुआ।

यह कड़वी सच्चाई है कि आज बच्चों की तरबियत से जिस क़द्र लापरवाही बरती जा रही है, बीस-पच्चीस साल पहले ऐसा बुरा हाल नहीं था। अगरचे अब स्कूलों की बहुतायत है, बस्तों का बोझ, होमवर्क की भरमार और ट्यूशन सेंटरों और कोचिंग सेंटरों का दौर-दौरा है, इसके बावजूद बच्चों की तालीमी सूरतेहाल और अख़लाक़ी हालत दुरुस्त नहीं है। हर ख़ास व आम की ज़बान पर इसकी शिकायत है। पढ़े-लिखे और समझदार लोग परेशान और फ़िक्रमन्द हैं। इसकी अस्ल वजह यही है कि तालीम व तरबियत के जो मरहले घर में ही तय होने थे, उसकी तरफ़ ध्यान या तो कम हो गया है, या फिर ध्यान दिया ही नहीं जा रहा है। दूसरी वजह मुस्लिम समाज की

इस्लामी तालीमात से दूरी है, जिसके नतीजे में समाज जो मंज़र पेश कर रहा है, वह इतमीनान बख़्श नहीं है। आज जो बच्चे हमारी गलियों और मुहल्लों में नज़र आ रहे हैं, उनसे पूछा जाए तो उन्हें नहीं मालूम कि उनकी ज़िन्दगी का अस्ल मक़सद क्या है। यह सूरतेहाल इन्तिहाई फ़िक्रमन्द करनेवाली है।

साइंस और टेक्नॉलोजी के असरात

साइंस और टेक्नॉलोजी की तरक़्क़ी ने ज़िन्दगियों में बड़ी तबदीलियाँ पैदा कर दी हैं। तालीम के अन्दाज़ बदले, तफ़रीह और मनोरंजन ने नए रंग-रूप अपनाए हैं। मोबाइल और इंटरनेट अब कोई नई बात नहीं रही, बल्कि ये चीज़ें अब आम लोगों के हाथों तक पहुँच चुकी हैं। इसके असरात से बच्चे भी नहीं बच सके हैं। कुछ वक़्त पहले तक टेलीविज़न ने जिस तरह बच्चों को मुतास्सिर किया था, अब इंटरनेट की सुहूलतें उससे ज़्यादा क़हर ढा रही हैं।

इस मौजूदा दौर में होनेवाली इंक़िलाबी ईजादों ने इनसानी ज़िन्दगी को हर पहलू से मुतास्सिर किया है। तेज़ रफ़्तार मीडिया जैसे इंटरनेट, फ़ेसबुक, मोबाइल वग़ैरा से बच्चे भी मुतास्सिर हुए बिना नहीं रह सके। कुछ असरात सीधे तौर पर पड़ते हैं और कुछ दूसरे ज़रिओं से। ये असरात उन बच्चों पर पड़ते हैं, जिनके माँ-बाप मोबाइल पर हद से ज़्याद मसरूफ़ (व्यस्त) रहते हैं। मोबाइल से उनका यह हद से ज़्यादा जुड़ाव उन्हें बच्चों की तरफ़ से लापरवाह बना देता है। माँ भी अपने ज़रूरी काम निबटाकर मोबाइल लेकर बैठ जाती है, जिसकी वजह से बच्चों पर पूरा ध्यान नहीं रह पाता। छोटे बच्चों के लिए अब न माँ के

पास लोरी सुनाने का वक़्त है और न उनके बाप के पास उनकी छोटी-छोटी शरारतों से मज़े लेने का मौक़ा। अब उन्हें उनकी इस्लाह व तरबियत की फ़ुरसत ही नहीं रही। नतीजा यह हुआ कि बच्चे माँ-बाप की देख-रेख से महरूम हो गए। उनके हाथ में मोबाइल देखकर बच्चे भी मोबाइल के लिए मचलने लगे। माएँ उनके हाथ में भी एक मोबाइल पकड़ा देती हैं और बहुत ख़ुश होती हैं कि 'इतना छोटा-सा है और अभी से मोबाइल का इतना शौक़ है!' बच्चा थोड़ा बड़ा होता है तो मोबाइल चलाने लगता है। वह उम्र जो सीखने और समझने की होती है, उसमें हम उनको दुनिया से काटकर मोबाइल की दुनिया में समेट देते हैं। अब बच्चा अपने रूम, अपने मोबाइल और लैपटॉप तक सिमटकर रह जाता है और उनकी रंगीनियों में खोकर सब कुछ भूल जाता है। एक साल से कम उम्र के बच्चों को मोबाइल की रंगीनी दिखाकर खाने की तरफ़ माइल किया जाता है। कुछ जगहों पर तो नन्हे मियाँ फ़ीडर मुँह में दबाए हुए होते हैं और निगाहें टीवी या मोबाइल स्क्रीन पर जमी होती हैं। यह ग़ैर-सेहतमन्द तर्ज़े-ज़िन्दगी मासूम बच्चों के साथ खिलवाड़ है। माहिरीन ख़बरदार कर रहे हैं कि इस कल्चर से बच्चों की सेहत ही नहीं, बल्कि आँखों की रौशनी भी मुतास्सिर होती है और मोबाइल से निकलनेवाली रेडियाई किरणें उनके लिए ख़तरनाक होती हैं। खेल-कूद, दौड़-भाग से बच्चों की जो जिस्मानी सलाहियतें परवान चढ़ती हैं, उनसे वे महरूम हो रहे हैं। माँ-बाप को लगता है कि बच्चे के हाथ में एक मोबाइल थमाकर हम बहुत-से मसलों से छुटकारा पा गए हैं, अब न उसकी ज़िद है, न भाई-बहनों की आपस की लड़ाई और न उनपर मेहनत करने की

कोई ज़रूरत है। डिजिटल इंक़िलाब के बुरे असरात ने पूरी नस्ल को तबाही के गढ़े के किनारे खड़ा कर दिया है। दूध पीते बच्चों से लेकर अटठारह-बीस साल तक की उम्र के बच्चों के अलग-अलग मसले हैं। बच्चा जब मोबाइल ख़ुद चलाना सीख लेता है, तो उसके सामने एक ऐसी दुनिया आ जाती है जिसमें सब कुछ उसकी पहुँच में हो जाता है। भले-बुरे की तमीज़, बुराई से रुकने और भलाई को चुनने की तरबियत की तरफ़ से लापरवाही बच्चों को बहुत भयानक ख़तरों की तरफ़ ले जाती है। बच्चे हिम्मत और हौसलेवाले और मेहनती बनने के बजाय ख़ुद को कार्टून की दुनिया के सुपरमैन, डोरेमॉन, शिवा, किडक्रिश और न जाने क्या कुछ समझने लगते हैं, लेकिन अमली ज़िन्दगी में वे कोई क़ाबिले-ज़िक्र रोल अदा नहीं कर पाते। वे उस ख़याली दुनिया की चमक-दमक और ऐश व मस्ती को हक़ीक़ी ज़िन्दगी समझने लगते हैं, लेकिन जब हक़ीक़ी ज़िन्दगी की कड़वी सच्चाइयों से उनका वास्ता पड़ता है, तो वे उनका सामना नहीं कर पाते और कुछ भी कर गुज़रते हैं।

मोबाइल कम्पनियाँ सिर्फ़ पैसा कमाने के लिए बच्चों को मोबाइल गेम्स का चस्का लगाती हैं। शुरू में ये गेम्स मुफ़्त होते हैं, लेकिन जब बच्चे को खेल में जीत का चस्का लग जाता है और वह खेलते-खेलते कामयाबी की मंज़िल से कुछ ही दूर होता है, तो उसको पैसा ख़र्च करके ऐप ख़रीदने का ऑफ़र दिया जाता है। इस मरहले पर वह खेल से पीछे हटना नहीं चाहता और सब कुछ करने की कोशिश करता है, जिसमें चोरी, धोखाधड़ी, माँ-बाप के खाते से चोरी, सब कुछ करता है। अख़बारों की ख़बरों के मुताबिक़ 'ब्लू-व्हेल' गेम के चक्कर में

कई मासूम बच्चों ने ख़ुदकुशी तक कर ली। यही मामला 'फ़ेसबुक' की दोस्तियों का है। लड़कियाँ दोस्ती के नाम पर ख़तरनाक हालात का शिकार होती हैं। सेल्फ़ी लेने के शौक़ में कितने ही बच्चे अपनी जानों से हाथ धो बैठते हैं।

डिजिटल इंक़िलाब ने जहाँ इनसान को बहुत-सी आसानियाँ दी हैं, वहीं उसके ग़लत इस्तेमाल ने इनसानियत के लिए बहुत-से ख़तरे पैदा कर दिए हैं। नतीजा यह होता है कि बच्चे न अख़लाक़ी क़द्रें सीखते हैं और न उनके नज़दीक रिश्तों-नातों की अहमियत होती है। जैसे-जैसे वे बड़े होते हैं, मोबाइल से ज़्यादा-से-ज़्यादा तफ़रीह हासिल करने लग जाते हैं। इस तरह उनकी नफ़सियात (मनोविज्ञान), सेहत और रंग-ढंग भी मसला बन जाते हैं। इन ईजादों से फ़ायदा उठाना और उनके बुरे असरात से बचना मौजूदा दौर की एक बहुत बड़ी चुनौती है।

पैसा कमाने के लिए औरत की जिद्दोजुहद

मौजूदा दौर ने ख़ानदानी ज़िन्दगी और बच्चों के लिए जो दूसरी बड़ी चुनौती खड़ी की है, वह औरत की ख़ुद ऐतिमादी (आत्मविश्वास) के नाम पर रुपया कमाने के लिए बाहर का रुख़ करना है। तालीम का आम होना किसी समाज के लिए बहुत ही अच्छी बात है, लेकिन जब तालीम का मक़सद महज़ रोज़गार हासिल करना बन जाए, तो फिर वह तालीम इनसान के ज़ेहन से उसकी पैदाइश के अस्ल मक़सद को निकाल देती है। आज के दौर की सबसे अफ़सोसनाक बात यह है कि लड़के और लड़कियाँ दोनों महज़ रोज़गार के लिए तालीम हासिल करते

हैं। जब इनसान की कोशिशों का मरकज़ रोज़ी-रोटी और ज़िन्दगी के ऐशो-आराम हासिल करना बन जाए, तो वह अपना अस्ल फ़र्ज़ (जिसके लिए उसे दुनिया में भेजा गया है) अदा नहीं कर सकता। औरत को मर्द के कन्धे-से-कन्धा मिलाकर खड़े होने और मर्द की तरह बाहर की दुनिया में अपनी मसरूफ़ियत तलाश करने का शौक़ औरत के अन्दर मंसूबाबन्द (सुनियोजित) तरीक़े से पैदा किया गया। इस काम में हमारा समाज, हमारे स्कूल-कॉलेज और हमारे समाजी इदारे (संस्थाएँ और संगठन) सभी बराबर के हिस्सेदार हैं। औरत ने बाहर की दुनिया में अपनी मसरूफ़ियतें पैदा कर लीं और रोज़ी-रोटी की जिद्दो-जुहद में हिस्सा लेना शुरू कर दिया, तो बच्चे इससे सबसे ज़्यादा मुतास्सिर हुए। उनके हुक़ूक़ मुतास्सिर हुए। थकी-हारी औरत चन्द घंटे भी अपने बच्चों को नहीं दे सकती। अल्लाह तआला ने औरत को माँ के बड़ी अज़मतवाले मक़ाम से नवाज़ा है। यह अज़ीम काम एक-दो घंटे या कारोबारी क़िस्म का नहीं है। यह त्याग, क़ुरबानी और मेहनत चाहता है। इसके लिए माँ को अपना ख़ून जलाना पड़ता है और उम्र खपानी पड़ती है, जब कहीं जाकर उसकी गोद से अज़ीम इनसान निकलते हैं। आज की माद्दी (भौतिक) दुनिया में खनकते हुए सिक्कों और ऐशो-आराम की चीज़ों से न इनसान वुजूद में आ सकते हैं, न उन्हें तराशा जा सकता है।

औरत बाहर मसरूफ़ हुई तो बच्चे माँ की गोद से, उसकी मुहब्बत से, उसकी तरबियत और तालीम से भी महरूम हो गए। नतीजे में बच्चों के Kinder garten, play school, monastery

school वुजूद में आते गए और बच्चों को अजनबी और कारोबारी ज़ेहनियत के लोगों के हवाले कर दिया गया, या फिर बच्चा बहुत छोटा है, तो उसकी देख-रेख के लिए नौकरानी रख ली गई। इन बच्चों की देखभाल के अमल में नौकरानी के हाथों बच्चों का जो बुरा हाल होता है, वह एक अलग अफ़सोसनाक बात है। इस सिलसिले में दिल दहलानेवाले वाक़िआत सामने आते रहते हैं। कभी-कभी तो यह देखा गया है कि मासूम बच्चा अजनबी गोद में माँ के लिए रो रहा है, उसके रोने से नौकरानी परेशान है, वह उसको चुप कराने के लिए अफ़ीम देने लगती है, यहाँ तक कि बच्चा इसका आदी हो जाता है। माँ की नींद उस वक़्त खुलती है जब बहुत देर हो चुकी होती है। कभी-कभी यह होता है कि बच्चा नौकरानी के पास है और उसकी माँ नौकरी पर गई हुई है। वह औरत उस बच्चे को गन्दे कपड़े पहनाकर किसी नुक्कड़ पर खड़ा करके उसे क़ाबिले-रहम हालत में दिखाकर भीख माँगने लगती है। यह तो वे ख़तरे हैं जो कभी-कभी नज़र आते हैं। सबसे बड़ा ख़तरा यह है कि ऐसी औरतों की ज़बान और उनके अख़लाक़ से बच्चा बचपन से मुतास्सिर हो जाता है और उनको सीख लेता है।

बच्चे की देखभाल और परवरिश माँ की ज़िम्मेदारी है और बच्चे का हक़ भी। बच्चा जब इस फ़ितरी हक़ से महरूम होता है तो उसके अन्दर बेबसी और बेचारगी की कैफ़ियत पैदा होती है, वह चिड़चिड़ा हो जाता है। ऐसे बच्चे ख़ुद एतिमादी खो बैठते हैं और आगे ज़िन्दगी के मैदान में कामयाब नहीं हो पाते।

वृद्धाश्रमों (Old age Homes) का चलन

दीन से दूरी, दीन से बेज़ारी और माद्दा-परस्ती (भौतिकवाद) ने मिलकर आज हमारे सामने एक ऐसी दुनिया ला दी है जिसमें घर के बड़ों के लिए हमारे दिलों में कोई जगह नहीं है, या है भी तो उनकी बड़ाई और क़द्रो-क़ीमत हम नहीं जानते। यह सूरतेहाल भी हमारे बच्चों को एक मज़बूत रखवाले से महरूम करने जैसी है। घर में बड़े-बुज़ुर्गों का वुजूद बच्चों की तरबियत के लिए एक मज़बूत सहारा होता है। मौजूदा माद्दा-परस्त (भौतिकवादी) दुनिया ने इनसानों को जिस तंगनज़री का शिकार बना दिया है, उसकी वजह से आज जगह-जगह बुज़ुर्गों के लिए वृद्धाश्रम (Old age homes) नज़र आ रहे हैं। पहले घर के बड़े-बूढ़े बच्चों की तरबियत में अपना रोल निभाते थे और बच्चों के माँ-बाप अपने बड़ों का अदब व एहतिराम अपने बच्चों के दिलों में पैदा करते थे, लेकिन इस मज़बूत रिश्ते से आज न बच्चों को वाक़िफ़ कराने की ज़रूरत महसूस की जा रही है और न बच्चे उनका एहतिराम कर रहे हैं। बच्चों की तालीम और तरबियत में यह ख़राबी भी एक बड़ी चुनौती है।

पाबन्दियों से आज़ाद समाज

इस वक़्त समाजी ज़िन्दगी बड़ी उथल-पुथल की शिकार है। अल्लाह की दी हुई तालीमात से आज़ाद समाज के ज़हरीले असरात सब पर पड़ रहे हैं। समाज में फैली हुई बेशरमी और नंगापन, गन्दी फ़िल्में, नशीली तस्वीरें और वीडियो, लड़कों और लड़कियों का एक ही स्कूल-कॉलेज में पढ़ना और आज़ादाना

मेल-जोल, अख़लाक़ी क़द्रों को दक़ियानूसी क़रार देना, हर पुराने तरीक़े से बग़ावत के नाम पर समाजी और अख़लाक़ी क़द्रों की टूट-फूट और ख़ानदानी ज़िन्दगी का बिखराव, ये वे मसले हैं जो बे-दीन और ख़ुदा से बेज़ार तहज़ीब के पैदा किए हुए हैं। औरत की आज़ादी और मर्द से उसकी बराबरी के लिए बुलन्द होनेवाले नारों ने उसे ख़ानदान और बच्चों से लापरवाह बना दिया है। अब न समाज अपनी ज़िम्मेदारी निभाता है और न उसे क़ानून का डर है। समाजी सतह पर कुछ सालों में जो गिरावट आई है, वह अपने-आपमें एक रिकार्ड है। कोई बीस साल पहले तक यह सूरतेहाल नहीं थी। मुहल्ले और समाज में ग़लत कामों को रोकने के लिए मुहल्लेवालों में इतनी हिम्मत होती थी कि वे किसी भी शख़्स को रोकने की कोशिश कर सकते थे। हर इनसान की अपनी ज़ाती आज़ादी का नारा इस ज़ोर-शोर से बुलन्द हुआ कि लोग अपने-अपने ख़ोल में सिमट गए। मुहल्ले के वे शरीफ़ लोग, जो समाज के हर बच्चे को अपना बच्चा समझते थे, अब पड़ोसी के बच्चे के सुधार के लिए दस बार सोचने लगे कि कहीं यह पड़ोसी को ज़ाती मामलों में दख़लअन्दाज़ी न लगे और पड़ोसी का बच्चा अपनी आज़ादी की दुहाई न देने लगे। कल तक जो बातें बुराई और शर्मनाक मानी जाती थीं, सोच का पैमाना बदलने से वे आम बात समझी जाने लगी हैं। ऐब हुनर समझे जाने लगे हैं।

सन् 2018 मुल्की क़ानूनों में बदलाव और जुर्म की आज़ादी का साल साबित हुआ। हमजिंस परस्ती और 'अडल्ट्री' (बदकारी)

जैसे जुर्मों को क़ानूनी हिफ़ाज़त दे दी गई। इस अख़लाक़ी पाबन्दियों से आज़ाद समाज की वजह से बच्चों के लिए ख़तरे बढ़ गए हैं। नशीली चीज़ों का कल्चर फैलाकर पैसा कमानेवाले और समाजी जुर्म करनेवाले माहौल को गन्दा कर रहे हैं। क़ानून की रोकथाम भी कमज़ोर पड़ गई है। बच्चों के इग़वा (अपहरण) और बच्चियों के साथ इसमत-दरी (बलात्कार) के वाक़िआत हमारे समाज की भयानक तस्वीर पेश कर रहे हैं।

इन हालात में बच्चे न सिर्फ़ दीनी, अख़लाक़ी और समाजी पहूल से ख़तरे में हैं, बल्कि उनके वुजूद के लिए भी ख़तरे पैदा हो गए हैं। यह हक़ीक़त भी हमारे सामने रहनी चाहिए कि जिस क़द्र लापरवाही आज बच्चों के सिलसिले में नज़र आती है, गुज़रे ज़माने में यह सूरतेहाल नहीं थी। बच्चों को स्कूल भेजकर माओं का बेफ़िक्र हो जाना उन्हें दोनों तरह के ख़तरों में मुब्तला कर रहा है।

दूसरी हक़ीक़त यह भी हमारे सामने रहनी चाहिए कि माँ-बाप और औलाद का रिश्ता क़ानूनी नहीं है, बल्कि यह जिस्म व जान का रिश्ता है। आज पश्चिमी देशों में बच्चे 18 साल की क़ानूनी उम्र को पहुँचने के बाद माँ-बाप से अलग होने के लिए आज़ाद हैं। माँ-बाप भी उनको अपने पास रखना नहीं चाहते। इनसान को अक़्ल व समझ देकर अल्लाह ने उसे इस दुनिया के तमाम जानदारों से बेहतर बनाया है। वह जानवरों की तरह नहीं है कि बड़े होने पर बच्चों से उसका कोई ताल्लुक़ न रहे, बल्कि औलाद से उसका मुस्तक़बिल जुड़ा होता है। उसके भले होने पर

अल्लाह के यहाँ उसे कामयाबी मिलेगी और बुरे होने पर इस मामले में पूछ-गच्छ का ख़तरा है। हम अपने बच्चों से लापरवाह और बे-ताल्लुक़ नहीं हो सकते। इसलिए स्कूल चुनते वक़्त या तालीम पूरी होने के बाद उनसे लापरवाही बरतने का रवैया ग़लत है। उनके भले-बुरे पर नज़र रखना हमारी ज़िम्मेदारी है। भलाई का हुक्म देने और बुराई से रोकने का फ़र्ज़ अल्लाह ने हम पर डाला है। इसलिए बच्चों को सुधारने और उनको बेहतर इनसान बनाने की कोशिश से हम कभी और किसी मरहले पर आज़ाद नहीं हो सकते। हमें समाज की सूरतेहाल पर नज़र रखनी होगी।

हाल के दिनों में हमारे मुल्क में बच्चों के क़त्ल और बच्चियों के साथ इसमत-दरी (बलात्कार) के जुर्म के ग्राफ़ में बहुत तेज़ी से इज़ाफ़ा हुआ है। यह सब इसी बेलगाम समाज का नतीजा है। ग़ौर करने की बात यह है कि इस तरह के घिनौने जुर्म करनेवाले मुजरिम भी ज़ाहिर है किसी की औलाद होते हैं। तरबियत का सही ढंग से न होना, तालीमी इदारों (शिक्षण संस्थाओं) का अपनी ज़िम्मेदारी न निभाना, समाजी निज़ाम का टूटता हुआ ताना-बाना, क़ानून की पकड़ का कमज़ोर होना, जब ये सारी बातें इकट्ठी हो जाती हैं तो समाज में जुर्म बढ़ जाते हैं और समाज मुजरिमों की पनाहगाह बन जाता है। इन ख़राब हालात में हमारे सामने जो चुनौतियाँ हैं, हमें हिम्मत और हौसले के साथ उनका सामना करना होगा और मसलों को हल करने के लिए नीचे लिखी बातों पर ध्यान देना होगा।

क्या है ज़िन्दगी का अस्ल मक़सद?

यह ज़िन्दगी बे-मक़सद नहीं है। अल्लाह तआला ने इनसान को तमाम जानदारों से बढ़कर बनाया है। इनसान न समाजी जानवर है, न मआशी (आर्थिक) जानवर और न वह ग़ैर-ज़िम्मेदार और पूरी तरह आज़ाद है। ज़िन्दगी और उसके साज़ो-सामान की शक्ल में जो नेमतें अल्लाह ने हमें दी हैं, एक दिन उसके पास हाज़िर होकर हमें इन सबका हिसाब देना होगा। जिसको अल्लाह ने जितनी दौलत दी है, उतने इम्तिहान के परचे हैं। उनको ज़ाया (नष्ट) होने से बचाना हमारी ज़िम्मेदारी है। औलाद अल्लाह की नेमत है, इसका शुक्र उसी वक़्त अदा हो सकता है जब इनसान इसकी क़द्र करे। नेमत की क़द्र नेमत के नुक़सान से बचाती है। ख़ुदा से बेपरवाह तहज़ीबों के दिए हुए नारों में ख़ुदा से बग़ावत है। 'छोटा परिवार, सुखी परिवार', 'बच्चे दो ही अच्छे' ये नारे दरअस्ल फ़ितरत के निज़ाम में दख़लअन्दाज़ी हैं।

इसी तरह नई तहज़ीब (माडर्न कल्चर) के दिए हुए नारे कि इनसान समाजी जानवर है, मआशी जानवर है, ज़िन्दगी मौज-मस्ती करने का नाम है, इनसान आज़ाद है, उसकी आज़ादी पर कोई रोक नहीं होनी चाहिए, औरत और मर्द के बीच बराबरी और औरत की आज़ादी के नारे, ये सब दरअस्ल ज़िन्दगी के बारे में ग़लत सोच का नतीजा हैं। अगर ज़िन्दगी के तसव्वुर की बुनियाद ग़लत नज़रियात और नारों पर होगी तो जीने का ग़लत ढंग ही वुजूद में आएगा। ज़िन्दगी के बारे में इस्लाम ने जो नज़रिया दिया है, उसी में भलाई और कामयाबी है। ज़िन्दगी का मक़सद साफ़ तौर से

मालूम होना चाहिए। इसका मक़सद अल्लाह की फ़रमाँबरदारी और उसकी इबादत है। इसी नज़रिए की बुनियाद पर जीने का सही तरीक़ा वुजूद में आ सकता है।

बच्चों की तरबियत पर ख़ास ध्यान दिया जाए

दुनिया में हर इनसान रोज़ाना देखता है कि अगर अच्छा बीज अच्छी ज़मीन में डाला जाए, कमज़ोर पौधे की हिफ़ाज़त की जाए और उसे मुनासिब खाद-पानी दिया जाता रहे, तो जब पौधा अपने तने पर खड़ा होता है तो उसमें आँधी के झक्कड़ों को बरदाश्त करने की ताक़त पैदा हो जाती है। इसी तरह बच्चे की परवरिश के शुरुआती दौर में अल्लाह की फ़रमाँबरदारी, उसका डर और उससे मुहब्बत के जज़बात का ख़मीर शामिल कर दिया जाए और उसको भले और बुरे की पहचान करा दी जाए, तो बाहर का माहौल उसपर अपना असर नहीं डाल सकेगा, या वह उसका असर लेगा भी तो अपनी पहचान बरक़रार रखेगा। बाहर का माहौल बच्चों का अमली मैदान है। इसमें भेजने से पहले माँ-बाप एक माहिर मुरब्बी (प्रशिक्षक) की हैसियत से बच्चों की तरबियत करें और तरबियत में दीन व अख़लाक़ का पहलू हावी रहे, तो बच्चा ख़तरों से ख़ुद मुक़ाबला कर लेगा। आज बच्चों के सिलसिले में माँ-बाप के लिए जो मसले और परेशानियाँ हैं, जिनका सिलसिला नाफ़रमानियों और मनमानियों से शुरू होकर माँ-बाप के लिए सारी ज़िन्दगी का सिरदर्द बना हुआ है, उसकी जड़ में यही ख़राबी है। अगर इमारत बनानेवाला पहली ईंट सही रखने की मेहनत नहीं कर

पाता, फिर चाहे वह आसमान तक भी दीवार बना ले, दीवार का टेढ़ापन दूर नहीं कर सकता।

तालीम का मक़सद

तालीम दरअस्ल अपने पैदा करनेवाले ख़ुदा की पहचान, ख़ुद अपने वुजूद की पहचान और फिर कायनात में मौजूद चीज़ों की पहचान का नाम है। वह इल्म जो पैदा करनेवाले से वाक़िफ़ न कराए, वह इनसान को ख़ुद से पहचान करानेवाला नहीं हो सकता। आज तालीम का मक़सद कायनात में मौजूद चीज़ों को जान लेना और उनको अपने माद्दी (भौतिक) फ़ायदे के लिए हासिल कर लेना समझा जा रहा है। तालीम के अस्ल मक़सद की जानकारी न होने से इनसान रूपयों के लिए जीनेवाला हैवान बन गया है, जबकि तालीम का अस्ल मक़सद यह है कि इनसान अपने पैदा करनेवाले को पहचाने और अपनी ज़िन्दगी के अस्ल मक़सद को जान ले। यह चीज़ आदमी को इनसान बना देती है। बदक़िस्मती से आज तालीम को सिर्फ़ रोज़गार बना लिया गया है, जिसका नतीजा यह है कि माँ-बाप बच्चों को सिर्फ़ रोज़गार के लिए पढ़ाना चाहते हैं। बच्चे के बचपन ही से माँ-बाप के दिल में ख़ाहिशें अंगड़ाइयाँ लेने लगती हैं कि हमारा बच्चा डॉक्टर बनेगा, इंजीनियर बनेगा, वग़ैरा। स्कूल-कॉलेज भी रोज़गार के लिए ही पढ़ाते हैं। कोर्स भी रोज़गार को ध्यान में रखकर तैयार किए जाने लगे हैं। इसमें समाज और ख़ुद इनसान के मसलों के हल का कोई ज़िक्र नहीं होता। औरतों की तालीम उन्हें उनका अस्ल फ़र्ज़ समझाने के बजाय रोज़गार का ज़रिआ

बन गई है। समाज में वे औरतें, जो पढ़ी-लिखी हैं फिर भी घर और बच्चों को ज़्यादा अहमियत देती हैं, रोज़गार को नहीं, आम तौर पर उनको अजूबा समझा जाने लगा है। उन औरतों के बारे में पहले तो लोगों को यक़ीन ही नहीं आता कि वे आला तालीम पाई हुई हैं, इसके बावजूद घर और बच्चे ही संभाल रही हैं। उनसे सवाल किया जाता है कि घर और बच्चे ही संभालना था, तो इतनी पढ़ाई की क्या ज़रूरत थी? समाज की इस बीमार और ख़तरनाक सोच को बदलने की ज़रूरत है। जिन औरतों ने रोज़गार के बजाय अपने अस्ल फ़र्ज़ को अदा करना ज़्यादा ज़रूरी समझा है, उनको अपने इस क़दम और अपनी सोच पर डट जाना चाहिए और लोगों के नज़रियात को सुधारना चाहिए। उन्हें बताना चाहिए कि घर की सल्तनत को संभालना और बच्चों की परवरिश की भारी ज़िम्मेदारी अदा करना कोई मामूली और गिरा-पड़ा काम नहीं है, बल्कि वह क़ाबिले-क़द्र ज़िम्मेदारी है जिसको अल्लाह तआला ने उनके लिए तय कर दिया है।

टेक्नॉलोजी का इस्तेमाल और अख़लाक़ी क़द्रें

साइंस और टेक्नॉलोजी इनसानियत के लिए अल्लाह की रहमत है। हर चीज़ के अच्छे और बुरे दोनों पहलू होते हैं और उसके अच्छे पहलू ही को इनसानियत के फ़ायदे के लिए इस्तेमाल किया जाता है। इसी तरह टेक्नॉलोजी यानी स्मार्टफ़ोन, इंटरनेट, फ़ेसबुक, मोबाइल ऐप्स वग़ैरा का सही इस्तेमाल ही करना चाहिए। बच्चों की तरबियत में अगर बुनियादी उसूलों का ध्यान रखा जाए तो उन्हें आसानी के साथ-साथ इस मामले में

सही रवैया अपनाने की तालीम दी जा सकती है। साइंस और टेक्नॉलोजी की खोज और ईजाद के नुक़सानदेह पहलुओं को देखकर उनसे दूर रहना ज़िन्दगी की जिद्दोजुहद से ख़ुद को दूर रखना है। इसके बजाय समझदारी के साथ बच्चों को इन चीज़ों से फ़ायदा उठाना सिखाएँ, लेकिन ज़रूरी है कि हर चीज़ के लिए उम्र का ख़याल रखा जाए। एक साल से कम उम्र के बच्चों को मोबाइल पकड़ाकर यह कहना कि यह टेक्नॉलोजी के दौर की नस्ल है, इनको तो सब कुछ देना ही है, अक़्लमन्दी नहीं है। उनको उन चीज़ों का इस्तेमाल सिखाते वक़्त अख़लाक़ी तालीम भी देनी चाहिए। उनको बताना चाहिए कि हम जो कुछ देखते, सुनते और सीखते हैं, अल्लाह तआला के यहाँ उसकी जवाबदेही करनी होगी। जैसा कि क़ुरआन में कहा गया है—

> "यक़ीनन आँख, कान और दिल, सब ही के बारे में पूछ-गच्छ होनी है।" (क़ुरआन, 17:36)

बच्चों को बचपन ही से इन बातों की तरबियत दी जाए तो बच्चे बड़े होकर मसला नहीं बनते। आज सोशल मीडिया का दौर-दौरा है। सोशल नेटवर्किंग के अन्धाधुंध इस्तेमाल ने बहुत-से ख़तरे पैदा कर दिए गए हैं। सुनी-सुनाई ख़बरों को सोशल नेटवर्किंग का हिस्सा बनाना, ग़ैर-अख़लाक़ी पोस्ट्स को आगे बढ़ाना और तन्हाई में बेहूदा तस्वीरें और वीडियो देखना, इन चीज़ों पर बच्चों की दीनी और अख़लाक़ी तरबियत के बिना क़ाबू नहीं पाया जा सकता। हर चीज़ के लिए क़ानून बनाना और उसको लागू करना ही काफ़ी नहीं, बल्कि इनसानों की समाजी और

अख़लाक़ी ज़िम्मेदारी होती है कि समाज को पाक-साफ़ और अख़लाक़ी लिहाज़ से बेहतर बनाने की कोशिश करें।

इनसानी रिश्तों का एहतिराम

टूटते-बिखरते घरों को बचाने के लिए ज़रूरी है कि नाते-रिश्तेदार और घर के बड़े-बुज़ुर्गों का एहतिराम किया जाए। इस्लामी तालीमात घरों में आम हो जाएँ तो दिलों की तंगी दूर हो सकती है। माद्दा-परस्ती वाली सोच पर रोक लगाई जाए और इस फ़िक्र को आम किया जाए कि इनसान का अस्ल घर आख़िरत है और अस्ल कामयाबी वहीं की कामयाबी है। अल्लाह तआला ने जिन रिश्तेदारों के हुक़ूक़ मुक़र्रर कर दिए हैं, उनको ख़ुशदिली के साथ अदा करने का माहौल बनाया जाए। इस तरह इनसानी रिश्तों-नातों का एहतिराम समाज में पैदा होगा तो बच्चों की तरबियत के मसले भी हल होंगे और उनकी हिफ़ाज़त भी होगी। माँ-बाप ख़ुद भी दुनिया और आख़िरत में कामयाब होंगे। पश्चिमी दुनिया की नक़्ल में बुज़ुर्गों को बोझ समझना छोड़ दें तो हम अपनी औलाद पर भी बोझ नहीं बनेंगे।

अल्लाह तआला फ़रमाता है—

तेरे रब ने फ़ैसला कर दिया है कि तुम लोग उसके सिवा किसी की इबादत न करो। माँ-बाप के साथ अच्छा सुलूक करो। अगर तुम्हारे पास उनमें से कोई एक या दानों बूढ़े होकर रहें, तो उन्हें 'उफ़' तक न कहो, न उन्हें झिड़ककर जवाब दो, बल्कि उनसे एहतिराम के साथ बात करो और नरमी और रहम के साथ उनके सामने झुककर रहो। दुआ किया करो कि "परवरदिगार!

इनपर रहम फ़रमा, जिस तरह इन्होंने रहमत और मुहब्बत के साथ मुझे बचपन में पाला था।" (क़ुरआन, 17:23,24)

ज़रूरत और ऐशो-आराम की चीज़ों का फ़र्क़

औलाद की अच्छी तरबियत माँ-बाप के लिए दुनिया और आख़िरत में कामयाबी का ज़रिआ है। माँ और बाप दोनों इसमें बराबर के शरीक हैं। अपनी रोज़ की मसरूफ़ियतों में औलाद के लिए वक़्त निकालाना बाप के लिए भी ज़रूरी है। सिर्फ़ अकेली माँ की तरबियत उस कमी को पूरा नहीं कर सकती जो बाप के ज़रिए अपना रोल अदा न करने से बाक़ी रहती है। जिस तरह बाप बच्चों के लिए खाना, कपड़ा और स्कूल की फ़ीस जमा करने के लिए फ़िक्रमन्द होते हैं, उसी तरह उनकी दीनी और अख़लाक़ी तरक़्क़ी के लिए उनकी फ़िक्रमन्दी ज़रूरी है। ज़रूरत इस बात की है कि हम अपनी ज़िन्दगी के लिए ज़रूरी और ग़ैर-ज़रूरी चीज़ों में फ़र्क़ करें। हमें यह समझना होगा कि कौन-सी चीज़ें हमारे लिए वाक़ई ज़रूरी हैं, जिनके बिना हमारा गुज़ारा नहीं हो सकता और कौन-सी चीज़ें महज़ ऐशो-आराम की चीज़ें हैं और उनके बिना भी हम गुज़ारा कर सकते हैं। इस फ़र्क को ध्यान में न रखने की वजह से आदमी पैसा कमाने की मशीन बन गया है। पैसे से वह बच्चे के लिए सुख-सुविधाएँ तो ख़रीद सकता है, लकिन उनका मुस्तक़बिल बेहतर नहीं बना सकता। बच्चों के बिगाड़ की वजह से बाप की मेहनत की कमाई अकारथ हो जाती है। कितने ही ख़ानदान ऐसे हैं, जहाँ बच्चों को माँ के पास छोड़कर बाप बच्चों के बेहतर मुस्तक़बिल

के लिए कई-कई साल घर और मुल्क से दूर परदेस में गुज़ार देते हैं। कभी तो ऐसा होता है कि बाप कमाकर जब घर वापस आते हैं, तो औलाद जवानी की दहलीज़ पर क़दम रख चुकी होती है। बाप की दूरी, बच्चों की तरबियत में उनकी हिस्सेदारी न होना, बच्चों को लापरवाह बना देता है और जिस सुख को हासिल करने के लिए बाप इतनी कड़ी मेहनत करता है, वापस आकर उसे महसूस होता है कि उसने बहुत कुछ खो दिया है। हमें याद रखना चाहिए कि ज़िन्दगी की सुख-सुविधाओं से दुनिया और आख़िरत का सुख हासिल नहीं किया जा सकता। वक़्ती तौर पर बीवी और बच्चों की ख़ाहिशें पूरी करके ख़ुश तो हुआ जा सकता है, लेकिन तरबियत में अपना हिस्सा अदा न करने से जो कमी पैदा हो जाती है, उससे हमारी ख़ुशी देर तक क़ायम नहीं रह सकती। मसले बोझ बन जाते हैं और अधूरी आरज़ुएँ बाक़ी रह जाती हैं। ज़रूरत है कि जब तक वक़्त की डोर हमारे हाथ में है, हम सही फ़ैसले करें और अपने फ़ैसलों को अल्लाह और रसूल (सल्ल॰) के दिए हुए पैमाने पर जाँचें, ताकि दुनिया और आख़िरत दोनों में कामयाबी हासिल हो सके।

> "ऐ हमारे रब! हमें अपनी बीवियों और अपनी औलाद से आँखों की ठंडक दे और हमको परहेज़गारों का इमाम बना।"
>
> (क़ुरआन, 25:74)

माँ-बाप के लिए ख़ुशख़बरी!

बच्चों की दीनी और अख़लाक़ी तरबियत माँ-बाप की ज़िम्मेदारी है। इस ज़िम्मेदारी को बेहतरीन तरीक़े से अदा करने के लिए अच्छा माहौल फ़राहम करना ज़रूरी है। आपकी कोशिश और अच्छा माहौल आपके बच्चे को बेहतर इनसान बना सकता है। **जमाअत इस्लामी हिन्द** बच्चों की दीनी और अख़लाक़ी तरक़्क़ी के लिए उनकी उम्र के तक़ाज़ों का लिहाज़ रखते हुए तरबियत के लिए प्लेटफ़ार्म फ़राहम करती है। अगर आपके बच्चों की उम्र 5 से 9 साल तक है, तो आप उन्हें **चिल्ड्रेन सर्किल** से जोड़िए। अगर आपके बच्चे 10 से 15 साल की उम्र के हैं, तो आप लड़कों को **SIO Stars** और लड़कियों को **जूनियर एसोसिएट सर्किल** (**JAC**) से जोड़ें और अगर आपके बच्चे 15 साल से ज़्यादा उम्र के हैं, तो लड़कों को छात्र संगठन **SIO** और लड़कियों को छात्राओं के संगठन **GIO** में शामिल करवाएँ। इन्शाअल्लाह, बेहतर माहौल और दीन की जानकारी आपके बच्चे को समाज का बेहतरीन सरमाया बनाने में मददगार साबित होंगे।

ज़्यादा जानकारी के लिए सम्पर्क कीजिए–

8368039839, 9871510945

بچوں کی تربیت میں معاون چند رہنما کتب

بچہ کی تربیت	ابن فرید
بچوں کی تربیت	سراج الدین ندوی
اولاد کی تربیت	مفتی مشتاق تجاروی
بچے اور اسلام	سید جلال الدین عمری
حسن معاشرت	یوسف اصلاحی
مثالی گھر اسلام کی نظر میں	جرجیس کریمی، مفتی مشتاق تجاروی، فہیم اختر ندوی
خاندان کی اصلاح اور اولاد کی تربیت	سید جلال الدین عمری
اسلامی خاندان	شعبہ ادارت
اسلامی نظام میں عورت کا مقام	مائل خیرآبادی
ہم ایسی بنیں	مائل خیرآبادی
بڑوں کی مائیں	مائل خیرآبادی
گھریلو جھگڑے	ابن فرید

مرکزی مکتبہ اسلامی پبلشرز، نئی دہلی ۲۵ | MMI PUBLISHERS
D-307,Dawat Nagar,Abul Fazl Enclave,Jamia Nagar,New Delhi-110025
Phone: 26981652,26984347 Mob: 7290092401
E-mail: info@mmipublishers.net,mmipublishers@gmail.com **Website:** www.mmipublishers.net

مفید کتابیں

نام کتاب	قیمت ہندی	قیمت اردو
1 औरत का मक़ाम इस्लाम की नज़र में	70.00	70.00
2 हम सफ़र	30.00	35.00
3 आधुनिक नारी	10.00	
4 प्यारे नबी (सल्ल.) की पाक ज़िन्दगी	40.00	
5 निकाह की बरकत और जहेज़ की लानत	20.00	
6 गुलदस्ता-ए-हदीस	80.00	
7 रमज़ान आया (बच्चों के लिए)	15.00	
8 प्यारा सफ़र //	20.00	
9 तोहफ़ा //	20.00	
10 तीन मोती //	15.00	
11 इस्लामी मालूमात क्विज़ गाइड //	30.00	
12 एक ख़ाब //	20.00	
13 अच्छी कहानियाँ //	20.00	
14 अनोखा दोस्त //	15.00	
15 अनोखा हंस //	15.00	

मधुर सन्देश संगम

مدھر سندیش سنگم

E-20,Abul Fazl Enclave,Jamia Nagar,New Delhi-110025,Phone 011-26953327. 09212356332,

E-mail: madhursandeshsangam@yahoo.co.in

بچوں کے لیے دلچسپ اور مفید کتابیں

اب تک یاد ہے	28.00
اچھی، سچی اور مزیدار باتیں	14.00
امانت کا بوجھ	45.00
ایک شعر ایک کہانی	23.00
بڑوں کا بچپن	24.00
بشریٰ کے خطوط	22.00
بنت حوا	28.00
بھولے بھیا	15.00
پھول کی پتی	28.00
پیارے رسولؐ کے پیارے ساتھی	24.00
پیشین گوئیاں	20.00
حضرت ابراہیم علیہ السلام	26.00
خانہ آبادی	16.00
رسول اللہ ﷺ کے جاں باز ساتھی	50.00
سچے افسانے	42.00
عبرتناک قرآنی قصے	30.00
کلام نرم و نازک	30.00
مرد ناداں	22.00
مسلم بھیا	16.00
نٹانوے قتل کے بعد	18.00
ولی کا سایہ	20.00
حضرت فاطمہ زہرا	84.00
پیارے نبی کے چار یار — اول تا چہارم	152.00
کیا مسافر تھے	32.00
ہمارے حضورؐ	30.00

ابن بطوطہ کا بیٹا	62.00
اچھے افسانے	42.00
ام المؤمنین حضرت عائشہؓ	70.00
امرود بادشاہ	16.00
ایک انسان دو کردار	16.00
بدنصیب	27.00
بڑوں کی آپ بیتیاں	48.00
بسم اللہ کی برکت	18.00
بنت اسلام	32.00
بہت خوب	15.00
پیارے خلیفہ	70.00
پیارے نبیؐ ایسے تھے	18.00
جھنٹی بچہ	10.00
خاتون جنت	24.00
خدیجۃ الکبریٰ	16.00
دانا حکیم	20.00
دو انسان ایک کردار	42.00
زبان کا زخم	16.00
شہزادہ توحید	16.00
عمر ثانیؒ (حضرت عمر بن عبد العزیز)	38.00
فیصلے	25.00
مزدور یا فرشتے	16.00
نقلی شہزادہ	34.00
نیت کا پھل	16.00
ہمارا ابن بطوطہ	62.00

MMI PUBLISHERS مرکزی مکتبہ اسلامی پبلشرز، نئی دہلی ۲۵

D-307, Dawat Nagar, Abul Fazl Enclave, Jamia Nagar, New Delhi-110025

Ph: 26981652,26984347 Mob: 7290092401

E-mail: mmipublishers@gmail.com, info@mmipublishers.net Web: www.mmipublishers.net

حکمت و دانائی کا خزانہ **منشورات** کی فکر افروز کتابیں

منشورات کی تازہ پیش کش

ایک مثالی ازدواجی زندگی کے لیے زادِ راہ

تری ذات سے ہیں سلسلے سارے

صفحات: 224 قیمت: -/200

خواتین کے فقہی مسائل پر ایک منفرد اور جامع تصنیف

فقہ النساء

مصنف: محمد عطیہ خمیس | قیمت: 270 روپے

علم، یقین، صبر اور کشمکش کی داستان

نمرہ احمد کا شاہکار

مُصحف

قیمت: -/250

عصرِ حاضر کی

مجاہد خواتین

مصنف: مریم السید ہنداوی

ترجمہ: محمد ظہیر الدین بھٹی

قیمت: -/160

صرف ۵ منٹ!

شام کی جیلوں میں گزارے ہوئے لرزہ خیز مظالم کے ۹ سال

مصنف: ہبہ الدباغ

ترجمہ: میمونہ حمزہ

قیمت: -/200

منشورات

پبلیشرز اینڈ ڈسٹری بیوٹرز

E-88A, First Floor, Abul Fazl Enclave,
Jamia Nagar, New Delhi - 110025
Ph.:**09811650228**, 09810650228
E-mail: manshuratindia@gmail.com

نوٹ: ہماری تمام مطبوعات مرکزی مکتبہ اسلامی پبلی شرز سے حاصل کی جاسکتی ہیں۔